शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 17
Issue 1&2
15, Jan- July, 2026

भारतीय ज्ञान परम्परा और न्याय : मीमांसा दर्शन के सन्दर्भ में

बीज शब्द :

धार्म, ज्ञान, न्याय, प्रमाण

भारतीय ज्ञान परंपरा और न्याय के संदर्भ में मीमांसा दर्शन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ज्ञान परम्परा और न्याय के उन्नति का मार्ग, कर्तव्य के प्रति संरचित दृष्टिकोण और वैदिक नियम के माध्यम से मानवीय मानदंडों को बनाए रखने की चिंतन मीमांसा दर्शन के समग्र आयामों में निहित है। मीमांसा दर्शन में न्याय की नींव के रूप में धर्म को स्वीकार किया गया है। धर्म, जिसका अर्थ है कर्तव्य, नैतिकता, सेवा और शांति अर्थात् मीमांसा दर्शन के अनुसार कौशल-युक्त धर्म का आत्मसात ही न्याय का वास्तविक स्वरूप है।

मीमांसा दर्शन में ज्ञान और न्याय का परस्पर संबंध है। मीमांसा दर्शन के अनुसार कौशलयुक्त ज्ञान के आधार पर कौशलपूर्ण कर्म करना ही न्याय का वास्तविक गुण है। ज्ञान और कर्म के मौलिक तत्व को अपने-अपने आचरण में आत्मसात करने से केवल व्यक्तिगत उन्नति का मार्ग प्रशस्त नहीं होता है, बल्कि इससे समग्र समाज, वैश्विक नैतिक न्यायपूर्ण व्यवस्था व कानून और भारतीय ज्ञान परम्परा व संस्कृति के उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है। लोकमत/लोक-कथाओं के अनुसार मीमांसा दर्शन मुख्य रूप से केवल अनुष्ठान से संबंधित है, लेकिन मीमांसा दर्शन के आचार्य व अन्य विद्वान रचित ग्रंथों की व्याख्या से यह ज्ञात होता है कि मीमांसा दर्शन जैव-विविधता व प्रौद्योगिकी, भारतीय ज्ञान परम्परा और न्यायिक प्रक्रिया आदि के मार्ग को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सकारात्मक प्रभावित और उन्नत करता है।

*****

हेमन्त कुमार
पीएच.डी. शोधार्थी,
दर्शनशास्त्र विभाग,
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

भारतीय ज्ञान परम्परा और न्याय : मीमांसा दर्शन के सन्दर्भ में

उद्देश्य:

I-भारतीय ज्ञान परम्परा के उत्थान में मीमांसा दर्शन के योगदान को हर-संभव स्पष्ट करना ।

II-वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मीमांसा दर्शन के न्याय व्यवस्था के महत्त्व को साधारण जनमानस तक पहुँचाना ।

प्रस्तावना:

मीमांसा दर्शन, जिसे 'पूर्व मीमांसा' या 'जैमिनीय मीमांसा' के नाम से जाना जाता है, यह भारतीय षड्दर्शन की एक प्रमुख शाखा है जो वेदों की व्याख्या और कर्मकांडों के महत्व पर केंद्रित है। यह दर्शन मुख्य रूप से धार्मिक और नैतिक नियमों (धर्म) और कर्मकांडों के कौशलयुक्त ढंग से पालन पर जोर देता है। मीमांसा का उद्देश्य वेदों की अनादि और अपौरुषेय (अमानवीय) मान्यता की पुष्टि करना और यह बताना है कि कैसे उनके नियम और निर्देशों का पालन करना धार्मिक और नैतिक दृष्टिकोण से आवश्यक है। साथ ही साथ भारतीय एवं वैश्विक चिंतकों के लिये मीमांसा दर्शन का अत्यंत महत्त्व है । मीमांसा के न्यायों का प्रयोग दर्शन एवं कर्मकाण्ड के क्षेत्र से बाहर भी देखा गया है । मीमांसा दर्शन के विधि से आधुनिक न्यायालय तक के निर्णय को प्रभावी करते देखा गया है । ऋषि शौनक ने शौनकोत्क्कं चरणसुत्रम् में लिखते है कि "नैकपुत्रेण कर्त्तव्यं पुत्र-दानं प्रयत्नतः ।"इनका ही उपयोग 'हिन्दू लॉ इन इट्स सोर्सेज', व्यावहारिक पहलू के रूप में हुआ है । गौतम ने गोद लेने के बारे में इसी प्रकार का मत व्यक्त किया है । जिसे हिन्दू विधि के स्त्रोत रूप में इस ग्रंथ में उध्दृत किया गया है । 'प्रिवी काउन्सिल' द्वारा दत्तक पुत्र के बारे में लिये गए उक्त निर्णय को मीमांसा न्याय का ही अंग बतलाया है । दाय-भाग के बारे में हिन्दू समुदाय के जीमूत वाहन (तिथि ग्यारह सौ से ग्यारह सौ पचास) की मिताक्षरा को ही आधार मानकर मीमांसकीय रीति आज भी स्वीकार्य है । वर्तमान समय में हिन्दुओं के सभी संस्कार-कर्म स्मृति के नियमों से व्याख्यायित और निर्दिष्ट होते हैं और ब्रिटिश शासक के समय में गोद लेने आदि के कानून मीमांसा से प्रभावित होते थे ।[1]

ऋग्वेद में कहा भी गया है कि "भद्रायां सुमतौ यतेम"[2] इस श्लोक का अर्थ है, हम सभी को 'भद्र' (कल्याणकारी) और 'सुमति' (शुभ और उचित विचार) की ओर प्रवृत्त होना चाहिए।

1 Mimansa Rules of Interpretation, Justice Markandey Kartju, Thomson Reuters, America, 2013

2 ऋग्वेद सूक्त 6.1.10

भारतीय ज्ञान परंपरा और मीमांसा दर्शन:

भारतीय ज्ञान परम्परा भारतीय उपमहाद्वीप के प्राचीन ज्ञान और ज्ञान की समृद्ध को रेखांकित करती हैं, जिसमें दर्शन, आध्यात्मिकता, कला, विज्ञान, गणित, चिकित्सा, आदि शामिल है। भारत की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक विरासत में निहित, भारतीय ज्ञान परम्परा ब्रह्मांड और उसके भीतर हमारे स्थान को समझने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है। दर्शनशास्त्र एवं दार्शनिक चिंतन ज्ञान के विकास की करी को पोषित करता है जिसमें मीमांसा दर्शन और उनके आचार्यों का योगदान कालजयी है। ज्ञानमीमांसा दर्शनशास्त्र की एक प्रमुख शाखा है जिसमें ज्ञान का उद्भव, स्वरुप एवं ज्ञान के स्रोतों की प्रमाणिकता को व्याख्यायित किया जाता है। मीमांसा दर्शन के अनुसार ज्ञान के दो प्रकार है प्रत्यक्ष ज्ञान और परोक्ष ज्ञान । यथार्थ ज्ञान मीमांसा दर्शन के अनुसार वह ज्ञान है जिससे किसी विषय में नई बात का ज्ञान होता है जो किसी अन्य प्रमाण पर आश्रित नहीं होते हैं, तथा परोक्ष ज्ञान में ज्ञान और उसका विषय दोनों भिन्न देशकाल में होता है । मीमांसा दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान एक है और परोक्ष ज्ञान के पांच प्रकार हैं। साथ ही ज्ञान के चार अवस्थाओं में प्रमा, प्रमेय, प्रमाता और प्रमाण को माना गया है|

भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रमाण (ज्ञान के साधन) का महत्वपूर्ण स्थान है। मीमांसा दर्शन के अनुसार ज्ञान प्राप्ति के विभिन्न साधन हैं, जिन्हें प्रमाण कहा जाता है। इन प्रमाणों के माध्यम से कौशलयुक्त ज्ञान का अन्वेषण होता है। मीमांसा दर्शन में ज्ञान के साधन के रूप मे छः प्रमाणों को स्वीकार किया गया है:

- प्रत्यक्ष : इंद्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान ।
- अनुमान : तर्क के आधार पर निष्कर्ष निकालना ।
- शब्द : वेदों का प्रमाण, विशेषकर वेदों की वाणी ।
- उपमान : सादृश्य या तुलना द्वारा ज्ञान प्राप्ति ।
- अर्थापत्ति : अनिवार्य या अपरिहार्य निष्कर्ष ।
- अनुपलब्धि : अभाव या न होने का ज्ञान ।

प्रमाण का स्वरुप : भारतीय दर्शन में यथार्थ ज्ञान को प्रमा और जिसके माध्यम से ज्ञान प्राप्त होता है उसे प्रमाण कहते हैं । शास्त्रदीपिका में पर्थसारथी मिश्र यह कहते हैं की जो कारण-दोष एवं स्त्रोत -दोष से रहित है वही प्रमाण हैं ।

प्रमाण के प्रकार : मीमांसा दर्शन के प्रणेता महर्षि जैमिनि तीन

प्रमाण को स्वीकार करते है ये तीन प्रमाण है प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द । प्रभाकर मिश्र इन तीन प्रमाण के अतिरिक्त उपमान और अर्थापत्ति को भी प्रमाण के रूप में स्वीकार करते हैं तथा कुमारिल भट्ट इन पांच प्रमाणों के अतिरिक्त अनुपलब्धि को भी प्रमाण के रूप में स्वीकार करते हैं ।

भारतीय दर्शन में प्रामाण्यवाद संबंधी विभिन्न मत :

भारतीय दर्शन में ज्ञान की उत्पत्ति के समय ज्ञान के स्वरुप और उसकी प्रमाणिकता को लेकर विभिन्न मत हैं। यहाँ इस संबंध में दो मुख्य प्रश्न उभरकर सामने आते हैं, पहला ज्ञान का ज्ञान कैसे होता है? और दूसरा ज्ञान की सत्यता और प्रमाणिकता का ज्ञान कैसे होता है?। इसी आधार पर प्रामाण्यवाद के चार पक्ष उभरकर सामने आते हैं, स्वत: प्रामाण्यवाद, स्वत: अप्रामाण्यवाद, परत: प्रामाण्यवाद एवं परत: अप्रामाण्यवाद । लेकिन भारतीय दर्शन में मीमांसा एवं वेदान्त दर्शन स्वत: प्रामाण्यवाद एवं परत: अप्रामाण्यवाद में विश्वास करते हैं।

मीमांसा दर्शन के प्रमुख सिद्धांत और न्याय:

•अर्थवाद्: मीमांसा दर्शन वेदों के प्रत्येक वाक्य को अर्थपूर्ण मानता है, और उनका

उद्देश्य धार्मिक अनुष्ठानों का पालन करना है जो न्याय से सम्बंधित है।

•कर्मकांड का महत्व: मीमांसा का मुख्य उद्देश्य यज्ञ और अन्य धार्मिक कृत्यों का

समर्थन करना है, जो वेदों के अनुसार धर्म का स्रोत हैं, अर्थात् धर्म न्याय का आधार बिंदु है।

•अपौरुषेयता: मीमांसा मानता है कि वेद अनादि और अपौरुषेय हैं और इनका ज्ञान किसी मानव द्वारा निर्मित नहीं है। मीमांसा दर्शन एक कर्मकांड और ज्ञानकाण्ड प्रधान प्रणाली है जो ध र्म को वेदों में निर्दिष्ट कर्तव्यों के माध्यम से परिभाषित करता है। न्याय का

दृष्टिकोण यहाँ तर्क और सत्य के बजाय वेदों के प्रामाणिकता पर आधारित है, और यह वेदों के आदेशों के पालन को सर्वोच्च मानता है।

धर्म और न्याय:

मीमांसा दर्शन में न्याय को स्वतंत्र रूप से नहीं देखा गया, बल्कि इसे धर्म के संदर्भ में समझा गया है। धर्म, जिसका अर्थ है कर्तव्य, नैतिकता, और धार्मिक आचरण, का पालन ही न्याय का वास्तविक स्वरूप है। वेदों के अनुसार किए गए कर्मकांड और आचार-विचार ही धर्म कहलाता है, और धर्म का पालन न्यायपूर्ण समाज की स्थापना करता है। धर्म का बोध प्रत्यक्ष रूप से नहीं होता, बल्कि वेदों के निर्देशों के अनुसार कर्मों द्वारा इसे जाना और समझा जा सकता है। इस संदर्भ में, मीमांसा दर्शन का मानना है कि कौशलयुक्त ज्ञान के आधार पर कौशलपूर्ण कर्म करना ही न्याय का वास्तविक रूप है। कर्मकांडों का पालन करना केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं है, बल्कि यह समग्र समाज और विश्व की न्यायपूर्ण व्यवस्था के लिए है।

• धर्म: मीमांसा दर्शन के अनुसार, धर्म का अर्थ है वह कर्तव्य जो वेदों में निर्दिष्ट है और जिसे करने से व्यक्ति को पुण्य प्राप्त होता है। धर्म का मूल तत्व 'कर्म' है, यानी धार्मिक कृत्य या अनुष्ठान। मीमांसा दर्शन का मानना है कि केवल

शास्त्रों के निर्देशों का पालन करने से ही धर्म की पूर्ति होती है, और यही मनुष्य की मुक्ति या सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग है। इसमें धर्म को नैतिकता या सामाजिक न्याय और शास्त्र-निर्दिष्ट कर्तव्यों के रूप में देखा जाता है, जो आत्मिक उन्नति और सद्गति के लिए आवश्यक हैं।

•न्याय: मीमांसा दर्शन में न्याय का अर्थ पारंपरिक अर्थों के साथ-साथ न्यायिक

प्रक्रियाओं का तात्पर्य वेदों के नियमों और अनुष्ठानों के सिद्धांतों की सत्यता और अनिवार्यता से है। मीमांसा दर्शन न्याय की खोज में प्रश्न नहीं उठाता, बल्कि न्याय को वेदों के रूप में सत्य मानते हुए उन पर आधारित कर्तव्यों का पालन आवश्यक मानता है।

ज्ञान और न्याय का संबंध:

मीमांसा दर्शन में ज्ञान और न्याय का गहरा संबंध है। सही ज्ञान से ही सही धर्म का पालन संभव है, और धर्म के पालन से न्याय की स्थापना होती है। चूंकि वेद ज्ञान का सर्वोच्च स्रोत हैं, इसलिए वेदों के अनुसार प्राप्त ज्ञान ही धर्म और न्याय का मार्गदर्शक है।

•धर्म में न्यायिक संरचना : मीमांसा दर्शन न केवल वेदों के मूल प्रतिपाद्य को व्याख्यायित करता है, बल्कि न्याय प्रणाली में कानून की शब्दावली, न्यायालयी प्रमाणों को पुष्ट करता है। मीमांसा के धर्म वेदमूलक हैं तथा वेद यज्ञमूलक हैं तो वेदों में वर्णित यज्ञ के विनियोग तथा यज्ञविधि तय करने में मीमांसा का उपयोग होता है। मीमांसा दर्शन भारतीय दर्शन की एक महत्वपूर्ण शाखा है, जो वेदों के कर्मकांड और धर्मशास्त्र की व्याख्या पर केंद्रित है। धार्मिक संरचना की दृष्टि से, मीमांसा दर्शन एक सुव्यवस्थित प्रणाली प्रस्तुत करता है, जो धार्मिकता, अधिकार, और न्याय के सिद्धांतों को समझ की गहराई स्पष्ट करता है। मीमांसा दर्शन का मुख्य उद्देश्य यह बताना है कि वेदों में बताए

गए कर्मकांडों (यज्ञ, पूजा, अनुष्ठान) के माध्यम से कैसे प्राप्त किया जा सकता है। वास्तुकला संरचना के निम्नलिखित प्रकारों का निर्धारण किया जा सकता है:

धर्म का सिद्धांत: मीमांसा में धर्म का अर्थ केवल पूजा-पाठ या अनुष्ठान से नहीं है, बल्कि यह आचरण और न्याय के सिद्धांतों के प्रति निष्ठा से भी है। धर्म, यज्ञ-आधारित निष्ठा और दायित्वों का पालन करके व्यक्ति के चारित्रिक आचरण का आदर्श प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

•कार्यविधि और परिणाम : मीमांसा दर्शन में 'कार्यविधि' (प्रक्रिया) और 'परिणाम' (फल) का विषय एक महत्वपूर्ण भूमिका है। यह दर्शन मुख्य रूप से वेदों के कर्मकांड, यज्ञ और धार्मिकता पर केंद्रित है, और इसमें कार्यशास्त्र और परिणामों का गहरा संबंध माना गया है।

•कार्यविधि का महत्व : मीमांसा दर्शन में कार्यविधि और परिणाम का संबंध व्यक्ति के धर्म और कर्म के सिद्धांत को स्पष्ट करता है। यह दर्शन बोध कराता है कि कर्म का दृष्टिकोण और प्रक्रिया का पालन ही फल का मार्ग है, और इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के जीवन में धर्म आधारित ज्ञान और न्याय की स्थापना करना है।

•प्राधिकरण की भूमिका: मीमांसा दर्शन में सत्ता की भूमिका एक सुव्यवस्थित और अनुशासित धार्मिक संरचनाओं का बनाए रखना अत्यंत महत्वपूर्ण है। वेदों के रूप में परम प्राधिकारी और गुरु के रूप में व्याख्यात्मक प्राधिकारी व्यक्ति को धर्म और सत्य के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी जाती है। यह प्रमाणित करता है कि

दिए गए वेदों में दिए गए धर्म और सिद्धांतों का पालन करने वाला व्यक्ति एक धार्मिक और न्यायप्रिय व्यक्ति होता है।

•व्यावहारिक न्याय: मीमांसा दर्शन में लोकतांत्रिक न्याय व्यवस्था से, जो व्यक्ति के कर्म, धर्म का पालन, और समाज की प्रतिष्ठा के माध्यम से व्यवहार में प्रकट होता है। यह दर्शन धर्म, कर्तव्य और कर्म के सिद्धांतों के आधार पर एक आदर्श व्यवस्था स्थापित करता है, जो केवल किसी व्यक्ति के जीवन को नियंत्रित नहीं करता है, बल्कि समाज में भी अनुशासन और संतुलन प्रस्फुटित होता है। साथ ही साथ मीमांसा दर्शन में शास्त्रीय न्याय की स्थापना, धर्म, कर्म और वर्णाश्रम व्यवस्था का पालन होता है। यह दर्शन यह सुनिश्चित करता है कि कोई व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत और सामाजिक विचारधारा का पालन करे और इस प्रकार जीवन में न्याय की स्थापना हो। वेदों के अभिलेख और कर्म सिद्धांत के माध्यम से, मीमांसा दर्शन व्यक्ति को न्यायपूर्ण जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है।

अत: मीमांसा दर्शन में ज्ञान और न्याय का गहरा संबंध है। यह दर्शन वेदों के धर्म और कर्तव्य के सिद्धांतों के माध्यम से एक ऐसी व्यवस्था की स्थापना करता है, जो व्यक्ति और समाज दोनों के लिए न्यायपूर्ण है। व्यक्ति के कर्तव्य पालन से व्यक्तिगत न्याय और वर्णाश्रम धर्म से सामाजिक न्याय की स्थापना होती है। मीमांसा दर्शन इस प्रकार व्यक्ति और समाज दोनों के लिए ज्ञान और न्यायसंगत कौशल प्रदान करता है।

निष्कर्ष :

भारतीय ज्ञान परंपरा में मीमांसा दर्शन के न्याय का स्थान अनुकरणीय है, क्योंकि यह धर्म, न्याय और वैदिक अनुष्ठानों की अनिवार्यता की पुष्टि करता है। मीमांसीय दृष्टिकोण यह मानता है कि न्याय का अर्थ वेदों के आदेशों का पालन और धर्म की स्थापना करना है। इस प्रकार, मीमांसा दर्शन भारतीय समाज में नैतिक, धार्मिक और न्यायिक आधार प्रदान करता है, जो न केवल व्यक्तिगत बल्कि सामाजिक स्तर पर भी सशक्त और संतुलित व्यवस्था की स्थापना करने का प्रयास करता है। मीमांसा दर्शन में ज्ञान और न्याय की सैद्धांतिक चर्चा विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह वेदों के अर्थों, धार्मिक कर्मकांडों और धर्मों के मिश्रण पर आधारित है। इस दर्शन में ज्ञान का स्रोत वेदों के शब्द और उनके निहित अर्थों को माना गया है, और न्याय के संदर्भ में वेदों के सिद्धांतों और धर्म की स्थापना को सर्वोच्च सिद्धांत बताया गया है। मीमांसा दर्शन में ज्ञान और न्याय के विषय पर मुख्य रूप से निर्णय लिया गया है ।

अत: भारतीय ज्ञान परंपरा में न्याय का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय दर्शन में न्याय का अर्थ केवल न्यायालय के संदर्भ में नहीं है, बल्कि यह सत्य की खोज, तर्क-वितर्क, विवेक और यथार्थता पर आधारित कौशलपूर्ण जीवन जीने की अभिप्रेरणा करता है। मीमांसा दर्शन भारतीय ज्ञान परंपरा का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो समाज में नैतिकता, कर्तव्य और सत्य के सिद्धांतों को पोषित करता है।

शेष पृष्ठ सं0 84 पर